हिन्दी की वेदना

आद्या अग्रवाल
ऐमिटी इंटरनेशनल स्कूल, मोहाली, कक्षा 9 बी

सुनी एक वेदना-भरी पुकार,
अरे! ये तो खड़ी है, हिन्दी भाषा लाचार,
कह रही- करोड़ों की मैं शब्दावली,
पर आज न कोई मेरे साथ,
जाने क्यों, हिन्दी बोलना शर्म की है बात?

भारत की अनूठी कड़ी, हमारी हिन्दी है भाषा,
पर आज, किसको है इसे बोलने की अभिलाशा,
भागते सब अँग्रेजी भाषा की तरफ़,
मुझसे करते द्वेष और पक्षपात,
जाने क्यों, हिन्दी बोलना शर्म की है बात?

स्कूल हो या ऑफिस- हिन्दी बोलने में लजाते,
डरते हैं जैसे हिन्दी बोलने से वे अनपढ़ हैं कहाते,
हिन्दी न जानने पर गर्व से बताते,
यह कैसा है आघात?
जाने क्यों, हिन्दी बोलना शर्म की है बात?

स्वतंत्रता सेनानियों की की जो है बोली,
इसमें है गीता का उपदेश,
बड़े-बड़े दिग्गजों की रचनाओं का आधार,
उस भाषा से क्यों नहीं मिलते उनके जज्बात,
जाने क्यों, हिन्दी बोलना शर्म की है बात?

दुनिया करती हमारी हिन्दी का सम्मान,
पर क्यों इस महानता के सागर का हम ही करते अपमान?
दूसरी भाषाएँ सीखते, पर क्या फ़ायदा,
जब अपनी मातृभाषा से हैं अनजान,
जाने क्यों, हिन्दी बोलना शर्म की है बात?

हमारी संस्कृति का दर्पण, हिन्दी हर भारतीय में है विलीन,
पर हमारी इस शान को छोड़,
सभी बने अँग्रेजी के पराधीन,
हमारी मातृभाषा के लिए यह हैं एक अँधेरी रात,
जाने क्यों हिन्दी बोलना शर्म की है बात?

हर पल निखरते जाएँगे

विधव अवस्थी
ऐमिटी इंटरनेशनल स्कूल, वीकेसी, लखनऊ, कक्षा 10 ए

दिल में जब ठान लिया, रास्ते खुद ही निकलते जाएँगे,
हों मुश्किलें हजार, हम हर पल निखरते जाएँगे।

वो सफर ही क्या, जिसमें अनजाने मोड़ न हों,

कहीं तपती धूप, कहीं शीतल छोर न हो,
कहीं धीमी रफ्तार, कहीं पहुँचने की दौड़ न हो,
कहीं दूसरे को सहारा, कहीं अव्वल आने की होड़ न हो।

पहाड़ों का सीना चीर, नई राहें बनाएँगे,
जमाने को एक अमिट मिसाल दे जाएँगे,
हम हर पल निखरते जाएँगे,
हम पर पल निखरते जाएँगे।

तेरी हिम्मत तेरी तकदीर लिखती है,
लकीरें किस्मत की, कोशिशों से बदलती हैं,
ये मौसम है कल फिर बदलते जाएँगे,
आज शांत हैं तारे, कल फिर चमक अपनी पाएँगे।

अगर नीयत साफ है, भगवान भी तेरे साथ आएँगे,
हाथ पकड़कर दरिया के पार ले जाएँगे,
हम हर पल निखरते जाएँगे,
हम हर पल निखरते जाएँगे।

भ्रष्टाचार

अरिशि अग्रवाल
ऐमिटी इंटरनेशनल स्कूल, वसुंधरा, सैक्टर 1, कक्षा 10 डी

भ्रष्टाचार तो जैसे बन गया है इस देश का वायरस,
फैलता जा रहा हर जगह चाहे हो दफ्तर या बस।
कहाँ है कोई रिस्क करप्शन के खेल में,
जब रिश्वत ही बचा लेती है जाने से जेल में।

दिक्कत तो सिर्फ उनकी है जो नहीं रखते हैं वजन,
जो लोग खिला देते पैसा वो तो जीते आराम से और बुढ़ापे में गाते हैं भजन।
चोरों जैसा आचरण करके लूट लेते हैं प्यार से,
बाहर से लगते हैं जैसे बड़े ही अच्छे होंगे व्यवहार से।

अत्याचार करके बनते हैं ये आस्तीन के साँप,
होते तो बड़े शाने पर मीठी सी करते वार्तालाप।
पहुँच है इनकी बड़ी दूर तक न करना इनसे शैतानी,
भून कर रख देंगे तुम्हे अगर बात न इनकी मानी।

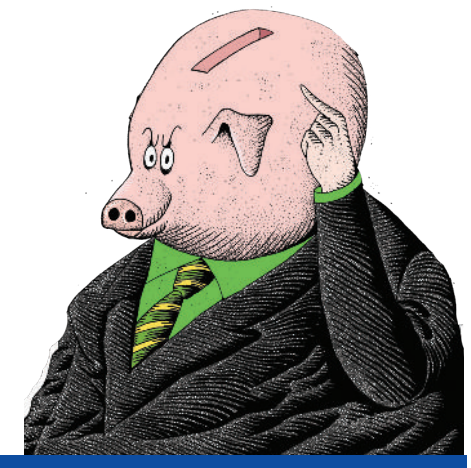

अमिताशा के आँगन से

काश! मैं हमेशा छोटी होती

आयुशी राय, अमिताशा नौएडा, कक्षा 12

काश! मैं हमेशा छोटी होती,
छोटे-छोटे हाथों से,
कभी माँ का चेहरा,
कभी उसका आँचल पकड़ती,
कभी रोने पर, तो कभी प्यार से,
माँ गोद में उठाकर,
थपकी देकर मुझे सुलाती।

काश! फिर से माँ मुझे अपने हाथों से खिलाती
डर लगने पर, माँ के आँचल में छिप जाती,
कहीं तरस गई हूँ मैं,
उस प्यार, उस आँचल, उस खयाल के लिए,
देखो न माँ! जिम्मेदारियों में कितना उलझी हूँ,
आज भी मेरे अंदर की छोटी बच्ची,
आपका प्यार ढूँढती है,
बिना कहे आप फिर से समझ जाएँ
इसकी आस लगाती है।

माँ का प्यार

आरती पंडित, अमिताशा नौएडा, कक्षा 12 जे

क्या लिखूँ उस शख्स के बारे में,
जिसके चरणों में जन्नत बसती है,
कुछ इस प्रकार बयाँ करना चाहूँ,
कि उसके लिए यादगार बन जाऊँ ।

कहते हैं, माँ ईश्वर का साक्षात रूप है,
धरती पर बसते इसके अनेक रूप हैं,
मेरी माँ मेरी जन्नत, मन्नत और मेरी दुआ है,
जिसके बिना लगता अधूरा, ये सारा जहान है।

जीवन का हर लम्हा यादगार बन जाता,
अगर माँ का सदैव साथ मिल जाता,
मेरे जीवन की ख्वाहिश है मेरी माँ,
मेरे सुख-दुख का सहारा है मेरी माँ।
मेरी माँ सुनहरे अक्षरों की वह किताब है, जिसे
पढ़ ले जो जीवन सार्थक बन जाए,
मेरी हर मंजिल के पीछे का राज है मेरी माँ,
मंदिर मूरत, मेरी जन्त, मेरी मन्नत, मेरी माँ।

बचपन के रंग

श्रद्धा पाण्डे, अमिताशा नौएडा, कक्षा 12 जे

बचपन के सुनहरे रंग,
जवानी में हो जाते हैं बेरंग,
याद आदती है वो मीठी मुस्कान,
जब खिलखिलाकर हँस उठते थे हम।

याद आता है वह सुकून का पल,
जब थक के सो जाते थे माँ की गोद में,

महसूस होती है आज भी वो थपकी,
गुम हो गए वो पल, ज़िम्मेदारियों की आड़ में।

याद आता है त्यौहार का वो दिन,
जब खाने की प्लेट-थाली, सज जाती थी,
महसूस होती है, आज भी उस खाने की खुशबू,
जिसे देख गायब होती थी चेहरे की उदासी।

बचपन के थे अपने रंग, खेले यारों के संग,
न सुबह की खबर थी, न शाम के पहर थे,
स्कूल से जल्दी आना, खेलने भी जाना,
एक दिन भी न छूटता, वह खेल का मैदान।

माना मैं नासमझ थी,
फिर भी तितलियों की दीवानी थी,
आसमान के लाखों तारों में,
बचपन का एक चमकता सितारा थी।

एक किताब

खुशबू साहू, अमिताशा नौएडा, कक्षा 10 पी

बोली मुझसे एक किताब,
क्यों बैठे हो, यों निराश,
यदि सफल होना है जीवन में,
मुझे बना लो सबसे खास।

न ढलते सूरज को देखो,

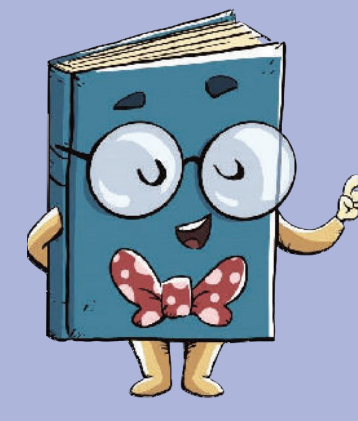

न उगने की करो प्रतीक्षा,
है अभी समय तुम्हारे पास,
मुझे बना लो सबसे खास।
बोली मुझसे...

पल-पल बीत रहा है काल,
घेर रहा तुमको जंजाल,
समय है मुठ्ठी की झाग,
मुझे बना लो सबसे खास।
बोली मुझसे...

उठो, उठाओ मुझको हाथ
देकर हर मुश्किल को मात,
नहीं छोड़ूगी तुम्हारा साथ
मुझे बना लो सबसे खास।
बोली मुझसे...